नहीं, हम तो मात्र जैनधर्म के असूलों को मानने वाले हैं ।

मेरा धर्मभ्राता रवीन्द्र जैन थक चुका था । मैंने होटल में भोजन तैयार करवाया, तव तक वह सो चुका था, मैंने उसे उठाया और खाना खाने को कहा । उसने वहुत अल्पमात्रा में खाना खाया । अव रात्रि काफी व्यतीत चुकी थी, यहां की मार्किट रात्रि को भी खुली रहती है । मैंने परिजनों को भेंट करने के कुछ उपहार खरीदे । जैन तीर्थ पर यही उपहार प्रसाद होता है । रात्रि बीती, सुवह हुई, हमने पुनः सारे मन्दिरों के दर्शन किये ।

मंदिरों में दर्शन पूजा से अभूतपूर्व शांति मिली । यह तीर्थ तीर्थराज है । यहां इतना शांत वातावरण है कि भिन्न-भिन्न देशों-प्रदेशों, भाषा, संस्कृतियों के यात्रियों के दर्शन होते हैं । यहां अनन्त तीर्थकर आये, भविष्य में भी आयेंगे और मोक्ष प्राप्त करेंगे । दिगम्वर मान्यता तो यह कहती है कि तीर्थंकर जन्म अयोध्या में लेते हैं, मोक्ष समेदशिखर से जाते हैं । पर वर्तमान चौबीसी मे यह आश्चर्य हुआ है कि तीर्थंकर कई स्थानों पर जन्मे । चौवीसवें में से २० ही यहां मोक्ष पधारे । धर्मशाला के यात्रियों से नजदीक पड़ने वाले तीर्थों के वारे में पूछा । एक यात्री ने वताया यहां से २८ कि.मी. की दूरी पर प्रभु महावीर का केवलज्ञान स्थान है, पर १६ कि.मी. दूरी पर श्वेताम्वर जैन समाज द्वारा मान्य लछुवाड़ है जो अपभ्रंश नाम है । इसका असल नाम लिच्छवी वाड़ होना चाहिये क्योंकि प्रभु महावीर लिच्छवी कुल के थे । उनका वंश ज्ञातृ था ।

# महावीर की श्वे० जन्म भूमि - लछवाड़ की ओर :

मैंने केवलज्ञान स्थान को वहीं से भाव-वन्दन किया । हमें एक यात्रियों का संघ मिल गया जो क्षत्रिय कुंडग्राम रहा था । वहां दो सीटें आराम से मिल गई । इस संघ में एक भजन मंडली व एक श्रीयति भी थे, जो गृहस्थ वस्त्र में थे । समेदशिखर में सराक जाति के वच्चों के उत्थान के लिये वहुत सारे यतियों ने पाठशाला खोल रखी है, जहां उन्हें मुफ्त शिक्षा दी जाती है । प्राचीन संस्कारों का ज्ञान करवाया जाता है । यह जाति जैन तीर्थंकरों को मानती है । इनकी गिनती विहार, वंगाल, उड़ीसा में पाई जाती है । दिगम्वर मुनि भी इनके गांवों में पाठशाला खोलकर इन्हें संस्कारित करते हैं । यह शाकाहारी समाज प्रभु पार्श्वनाथ को अपना इष्ट मानता है । ''सराक'' श्रावक का अपभृंश है ।

हम उसी गाड़ी में जा रहे थे, रास्ते में एक स्थान पर गाड़ी रुकी । यहां भी धार्मिक स्थल था, कुछ समय रुककर चायपान किया । सफर ज्यादा लम्वा था, हमें अव थकावट नहीं थी, मन में एक उत्साह था । प्रभु महावीर की तीसरी जन्मभूमि के दर्शन करने का सौभाग्य हमें मिल रहा था । चौदह सौ सालों से जैन तीर्थ यात्री इस स्थान की यात्रा करते रहे हैं । जन्मभूमियों में यह सवसे प्राचीन है । यहां के स्थानीय आदिवासी प्रभु महावीर के भक्त हैं । यह अपने ढंग से प्रभु महावीर के प्रति श्रद्धा रखते हैं । उस दिन भी एक जलूस आदिवासी पर्यूषण पर निकाल रहे थे। गांव में खूव चहल-पहल थी, लछुवाड़ भी अपनी नदियों व हरियावल चित्त को मंत्रमुगध करती है ।

यह स्थान वाया सिकन्दरीया में पड़ता है । विहार में

हम जहां-जहां भी गये, हमें नकसलवाड़ियों का सबसे अधिक प्रभाव हर स्थान पर लगा । यहां के हर गांव में लाल झंडे दिखाई देते हैं । हम जिस दिन लछुवाड़ पहुंचे, उस दिन गांव के वाहर आदिवासी अपनी वेषभूषा में नाचते गाते पहाड़ के नीचे वाले मन्दिर में आ रहे थे । खूब ढोल, नगारे वज रहे थे । हर स्थान पर चहल-पहल थी ।

## दर्शन :

यह स्थान प्रभु महावीर का जन्मस्थल माना जाता है । गांव का मन्दिर श्री यतिजी का है । जहां धर्मशाला, भोजनशाला है, रहने की सुन्दर व्यवस्था है, प्रभु महावीर का जन्म स्थान ऊपर पहाड़ी पर है । जहां तलहटी में प्रभु महावीर की २००० वर्ष से ज्यादा प्राचीन प्रतिमा विराजमान है, मंदिर में प्राचीनता के दर्शन कदम-कदम पर होते हैं । एक पहाड़ी पर राजा सिद्धार्थ के महल के खण्डहर हैं ।

पहाड़ के दूसरी ओर ब्राह्मण कुंडग्राम है, कुंडग्राम के दो भाग थे - ब्राह्मण कुंडग्राम व क्षत्रिय कुंडग्राम । प्रभु महावीर का जन्म जीव ब्राह्मण कुंडग्राम के ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानन्दा ब्राह्मणी गर्भ में ८४ दिन रहा । फिर शकेन्द्र ने इस गर्भ का परिवर्तन क्षत्रिय कुंडग्राम नरेश राजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला के यहां स्थापित कर दिया । यह विवरण श्वेताम्वर आगम आचारांग व कल्पसूत्र में मिलता है । यही ब्राह्मण व ब्राह्मणी प्रभु महावीर के प्रथम चतुर्मास में साधु वने । आत्म कल्याण कर मोक्ष के अधिकारी वने । भगवान महावीर के तीन कल्याणक यहीं हुए । यह तीन कल्याणक थे, च्यवन, जन्म व दीक्षा ।

प्रभु महावीर की दीक्षा छोटी सी नदी पार करके वहुसाल चैत्य में हुई थी । यह सुन्दर वन था । इसकी

सुन्दरता अभी कम नहीं हुई । यहां के लोग सरल व विनम्र हैं । अभी-अभी साध्वी चन्दना ने प्रभु महावीर के २६०० जन्म दिवस पर यहां एक स्कूल की स्थापना की है । इस स्थान का विकास हो रहा है । उनकी प्रेरणा से यहां बलि प्रथा बन्द हो चुकी है । अब साध्वी जी यहां परोपकारी योजना चालू कर रही हैं ।

यह तीर्थ लछुवाड़ से दूर स्थित कुंडलधार तलहटी के ऊपर स्थित है । प्रभु महावीर के जीवन के तीस वर्ष यहां व्यतीत हुए थे । तलहटी में दो छोटे मन्दिर भी हैं । इन स्थान को च्यवन व दीक्षा नाम से संबोधित किया जाता है । प्रभु की प्रतिमा प्राचीन होने के साथ-साथ पद्मासन में स्थित है । ठहरने के लिये यहां की धर्मशाला में १०० कमरे हैं । सभी कमरे सभी सुविधाजनक हैं । पहाड़ पर पानी की सुविधा है । इसका जिला जमुई है । यहां पहाड़ी पर चढ़ने में कठिनाई होती है ।

## लछुवाड़ यात्रा :

हम तीन बजे के बाद लछुवाड़ पहुंचे । हमने पहले वहां धर्मशाला वाले मन्दिरों के दर्शन किये, फिर पहाड़ पर ट्रालों से गये । वहां भव्य परिसर में प्रभु महावीर का मन्दिर है । जिसे स्थानीय लोग व श्वेताम्बर समाज इस स्थान को जन्म स्थान कहते हैं । प्राचीन काल से ही यात्री लोग प्रभु महावीर की प्राचीन प्रतिमा के दर्शन कर आत्म शांति अनुभव करते रहे हैं । यह कार्य जल्दी ही सम्पन्न हो गया । हम पर्वत की सौम्य घाटी में प्रभु महावीर के चरणों में झूम रहे थे । फिर नीचे उतरे । वापसी पर बाकी के मन्दिरों के दर्शन किये । मैंने प्रभु महावीर की तीसरी जन्म स्थली देख ली थी । अब हम वापस आये । लोगों का

आग्रह था कि हम रुकें, पर घर से निकले काफी दिन हो गये थे । उन दिनों एस.टी.डी. कोई सुविधा नहीं थी कि घरवालों को कुछ सूचना दे पाते ।

वापस सिकन्दरीया आये, शाम हो चुकी थी । हमने तांगा लिया । मात्र दो कि.मी. पर ही बस स्टैंड आ गया । यहां हमारा अगला गन्तव्य स्थान को बस पकड़ना थी । हमारी कुछ यात्रा ट्रेन से सम्पन्न हुई । रात्रि पड़ सुकी थी, यात्रा का क्रम चालू था । हमें यह तय करना था कि हम बोद्धगया जायें या सीधे बनारस । दोनों स्थान महत्वपूर्ण व दर्शनीय थे । पर इतनी लम्बी यात्रा का अन्त भी सुखद था । मेरे मन में अपने धर्मभ्राता रवीन्द्र जैन को तीर्थ यात्रा कराने की भावना थी । इस यात्रा में विहार के २-३ स्थानों को छोड़कर सभी जैन इतिहासिक स्थानों की यात्रा हमने कर ली थी । सबसे वड़ी वात प्रभु महावीर के जन्म स्थानों की यात्रा, राजगृही, पावापुरी व समेद शिखर की यात्रा थी । रास्ते में जो तीर्थ आये हमने दर्शन किये । चंपापुरी में भूचाल आया हुआ था, जिसका पता हमें नहीं था । इन तीर्थो का पता हमें वहुत वाद में चला । वाकी हम जन्म स्थान के कारण लम्वा मार्ग तय कर लिया था । वहां से लछुवाड़ के बस स्टैंड से वाराणसी आने के कुछ सफर हमने ट्रेन से किया ।

## बोध गया :

हमें पता चला कि यहां करीव ही प्रसिद्ध हिन्दू व वौद्ध तीर्थ नजदीक पड़ता है । शाम हो चुकी थी । हमने एक जीप ली । उसे पता किया कि वाराणसी को यहां से कव ट्रेन मिलेगी । उसने वताया कि रात्रि को यहां से कोई ट्रेन नहीं जाती । आप गया जी रुकें । यह अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन स्थल

है । सुवह यहां हिन्दू व वौद्ध तीर्थो की यात्रा कीजिये । हम रात्रि को २ वजे यहां पहुंचे । यहां स्टेशन के करीव एक होटल में ठहरे । यहीं थोड़ा भोजन किया, फिर सो गये । लम्वी यात्रा की थकान हमें महसूस हुई । सुवह हमने कमरा छोड़ा । अपना सामान लेकर गया दर्शन करने निकले । गया एक प्राचीन शहर है । यहां एक नदी है जिसे वौद्ध उरवेला नदी कहते हैं । इस तीर्थ का पुराणों में वहुत वर्णन है । यहां पांडों की भरमार है । यहां सारे भारत से पिंड दान करने आते है। गली गली में कुरसीनामे वही उठाये पांडे घूमते हैं, जो यह पिण्ड भराने वाले का नाम दर्ज कर लेते हैं । यह प्राचीन हिन्दू मन्दिरों, धर्मशालाओं का अच्छा समूह है । यहां पांडे आपसे पहचान जरूर प्राप्त करते हैं । वह आपका जिला व गांव का नाम अवश्य पूछते हैं । फिर वही पांडा आपके पास पहुंचता है जिसके पास आपके गांव का रिकार्ड है ।

गया का दूसरा भाग वोधगया है । इसका सम्वन्ध महात्मा वुद्ध से है । यहां संसार के हर देश का मन्दिर देखने को मिलता है । दो दिगम्वर जैन मन्दिर भी हैं। यहां अधिकांश विदेशी यात्री ही आते हैं । यहां वह स्थान हजारों साल से वरकरार है, जहां महात्मा वुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति हुई थी । वह इतिहासिक वटवृक्ष है, भगवान वुद्ध का चवूतरा है । महात्मा वुद्ध का प्राचीन मन्दिर है । इसकी प्राचीनता व भव्यता इतिहासिक है । वृक्ष के वारे में प्रसिद्ध है कि वट वृक्ष की एक शाखा सम्राट अशोक के पुत्र महेन्द्र व पुत्री सघमित्रा ने भिक्षु वनकर, श्रीलंका के अनुराधापुर में लगाई । मध्य काल में आक्रमणकारियों ने इस मन्दिर का प्रारूप वदल डाला । इस वृक्ष को उखाड़ फैंका । करीव १०० वर्ष से पहले श्रीलंका वाली वृक्ष की शाखा को यहां लगाया

गया है । इस वृक्ष के पत्ते यहां के यात्रियों के लिये यादगार हैं ।

"कहते हैं महात्मा बुद्ध ज्ञान की तलाश में काफी स्थानों पर भटके, कई सन्यासियों से मिले । उन्होंने कठोर तप किया, उनका शरीर का अस्थियों का पिंजर बन गया । उनके शरीर की नाड़ियां तक दिखाई देने लगीं । वह कमजोर पड़ गये। ऐसी अवस्था में वह इस वृक्ष के नीचे पधारे ।"

"रात्रि का समय था, एक काफिला गुजर रहा था । काफिले में एक नृतकी गा रही थी । उसने अपने साथी साजिदों को कहा, "तू इकतारा ध्यान से बजा । तू इसकी तार को इतना मत कस कि तार टूट ही जाये । तार को इतना ढीला मत छोड़ कि यह साज बजना बंद हो जाये ।"

"मात्र यह उद्‌बोधन के दो शब्दों में बुद्ध को ज्ञान की किरण दिखाई दी, उन्होंने सोचा "शरीर को इतना सुखाना भी नहीं चाहिये कि यह काम करना बंद कर दे । शरीर को इतना ढीला भी नहीं छोड़ना चाहिये, कि यह स्वछन्द बन जाये, धर्म को छोड़कर अधर्म को अपनाए । बुद्ध ने कठोर तप छोड़ दिया, उन्होंने ध्यानमार्ग अपनाया। बुद्ध ने अपने धर्म को ध्यान मार्ग का नाम दिया । उन्होंने मध्यम मार्ग का रास्ता प्ररूपित किया ।"

"फिर सुबह हुई, सिद्धार्थ शाक्यमुनि बोधि को प्राप्त हो गये । अचानक एक स्त्री आई । वह वट के वृक्ष के नीचे खीर चढ़ाने आई थी । वहां वट वृक्ष के नीचे बैठे महात्मा बुद्ध को इसने साक्षात् ब्रह्मदेवता मानकर खीर अर्पण की । बुद्ध ने खीर खाई, उनकी भूख मिटी । खीर इतनी स्वादिष्ट थी कि उन्होंने उस स्त्री से पूछा, "यह खीर इतनी स्वादिष्ट क्यों है ?"

स्त्री ने कहा, "महाराज ! मेरे यहां सौ गायें हैं, मैंने

उन सब को दुहा, इनका दूध पचास गायों को पिलाया, फिर उन ५० गायों के दूध को २५ गायों को पिलाया, फिर इन्हीं गायों का दूध १२ गायों को पिलाया, उन १२ गायों का दूध मैंने ६ गायों को पिला दिया, फिर मैंने दूध दुहकर २ गायों को पिला दिया । एक को पिलाया। फिर उन दो गायों के दूध से मैंने ये खीर बनाई है । सो इस खीर में १०० गायों का दूध समाया है, इसलिये ये खीर पुष्टिदायक है । बुद्ध ने बड़े आराम से पेट भर खीर खाई । खीर खाने के बाद उनमें अनुपम शक्ति का संचार हुआ । वह सारनाथ पहुंचे, जहां उन्होंने अपना प्रथम उपदेश दिया था ।

## गया यात्रा :

हम सुबह एक रिक्शे से रवाना हुए । सर्वप्रथम मैंने हिन्दू गया जी तीर्थ के दर्शन किये । एक पुरोहित जी हमारे गांव से संबंधित थे, वह मुझे साथ ले गया, उसने बड़े विधि विधान के साथ मुझे यहां के मन्दिरों के दर्शन करवाये । फिर नदी में पूजा करवाई। गया तीर्थ में पण्डे ही पण्डे हैं यहां पितृश्राद्ध व प्रायश्चित का विधान किया जाता है। यह सब लोग हिन्दू पुराणों के अनुसार करवाते हैं । इस तीर्थ का महात्मय हिन्दू पुराणों से भरा पड़ा है । मैंने यहां भी पूजा की । पुरोहित को यथाशक्ति दक्षिणा दी, फिर बौद्ध गया के लिये रवाना हुए ।

## बौद्ध गया में :

बौद्ध गया ३ कि.मी. की दूरी पर अंतराष्ट्रीय धार्मिक स्थल है । यहां बौद्ध भिक्षु कदम-कदम पर मिलते हैं । कुछ तो मन्दिरों में यात्रा के लिये आते हैं, कुछ मन्दिरों में स्थापित मठों में रहते हैं । सारा बौद्ध जगत यहां आता है । भारत में इस तीर्थ की महत्ता इसलिये भी है कि यह अपने सही

स्वरूपों में स्थापित है । यह लंका, वीयतनाम, कम्बोडिया, इंडोनेशिया, चीन, सिक्किम, भूटान, जापान, ब्रह्मा, थाईलैंड देशों के मन्दिर देखने योग्य हैं । यह मन्दिर कला का प्रतीक है । इन मन्दिरों में सोने की भी प्रतिमाएं हैं ।

हम भी वहां दोपहर को पहुंचे । यह स्थल आप घूमना चाहें तो कितने दिन रह सकते हैं, पर हम तो महात्मा बुद्ध का ज्ञान स्थल देखना चाहते थे । हम कुछ ही समय के बाद ऑटोरिक्शा से बौद्ध गया पहुंचे । बुद्ध का यह प्राचीन मन्दिर अपने भव्य शिखर तथा प्राचीन कला का प्रतीक है । यहां स्वयं राजा अशोक आया था, यह मन्दिर शायद अशोक के समय बने हों, पर यह चबूतरा व वृक्ष वहां पहले का था । कुछ ही समय बाद हम मन्दिर परिसर में पहुंच गये ।

हमने बौद्ध गया मे अनुपम श्रद्धा देखी । यहां पर स्थान आस्था भक्ति के दर्शन होते हैं । फिर हम दोनों ने विभिन्न देशों के मन्दिरों के दर्शन किये । यहां हमें बहुत से बौद्ध भिक्षुओं से मिलने का अवसर मिला । दोपहर हो चुकी थी, हम खाना खाने की तलाश करने लगे । यहां अधिकांश होटल शुद्ध नहीं । सो बस स्टैंड पर एक शुद्ध होटल मिल गया । हम हमेशा मारवाड़ी होटल में खाना खाते थे, ऐसे होटलों में घरेलू खाना बनता है । शुद्ध शाकाहारी खाना ही जैन श्रावकों के लिये शोभा देता है, यही जैन धर्म की पहचान है । प्राचीन काल से ही जैनों में खाने की व्यवस्था समाज का अंग रही है, जिसे जैन लोग सहधर्मी वात्सल्य कहते हैं

वाराणसी की ओर

बस स्टैंड से हमने सफर में तेजी लाने के लिये वाराणसी के लिये एक टैक्सी पकड़ी । यह गाड़ी एम्बेसडर थी । गाड़ी चली, हम जी.टी. रोड पर चल रहे थे ।

अचानक ही सहसाराम शहर आया । यह स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री जगजीवन जी का संसदीय क्षेत्र था । यहां हमें शाम होने वाली थी कि गाड़ी में पंक्चर हो गया । उस जंगल में हमें पंक्चर की दुकान व चाय की दुकान मिली । पंक्चर लगने लगा, मेरे धर्मभ्राता रवीन्द्र जैन ने ड्राईवर से कहा, "भाई ! ध्यान से पंक्चर चैक करवा लो, जो समय लगेगा, हम रुक जायेंगे ।" ड्राइवर ने कहा, "साहब, एक ही पंक्चर था, अब हम रवाना होंगे । पंक्चर पक्का था, उसकी टयूब को चढ़ाने से पहले चैक किया गया तो उसमें एक पंक्चर और था । फिर ड्राइवर ने पंक्चर लगाने वाले को कहा, "तूने पंक्चर की ओर ध्यान नहीं दिया, मेरी सवारी परेशान हो रही है ।" इसी वार्तालाप में आधे घण्टे से ज्यादा समय लग गया । मेरे धर्मभ्राता कुछ सफर की थकान से परेशान हो गया था, पर यात्रा तो जारी रखनी थी । घर छोड़े काफी समय हो चुका था, अभी कितने दिन और लगेंगे, पता नहीं था, क्योंकि यात्रा का अभी काफी लम्बा शडियूल हमारे सामने था ।

हम शाम के चार बजे वाराणसी पहुंचे । वाराणसी हिन्दू धर्म का प्रथम तीर्थ है । ६४ तीर्थों में सबसे बड़ा तीर्थ है । इसका नाम काशी, बनारस , मुगल सराय प्रमुख है । यह काशी विश्वनाथ के मन्दिर के कारण प्रसिद्ध है । वाराणसी प्राचीन भारत में धर्म, कला व संस्कृति का केन्द्र रहा है । यहां भगवान महावीर ने चतुर्मास किया था । श्री उपासक दशांग सूत्र के दस उपासकों में से दो उपासक इसी पवित्र भूमि से थे । यह स्थान अनेकों तीर्थंकरों के कल्याणकों का स्थल रहा है, जो वर्तमान वाराणसी के आस पास सुशोभित है ।

यहां भगवान बुद्ध अनेकों बार पधारे । इसी स्थान पर उन्हें शिष्यों की प्राप्ति हुई । यहां उनका प्रथम उपदेश हुआ,

यहां विशाल मठ व अशोक स्तूप देखने योग्य है । भारत सरकार की वर्तमान सरकारी मोहर भी इसी स्थल के अशोक स्तूप से प्राप्त हुई थी, इस पर तीन शेर हैं । इस स्थान पर बौद्ध व जैन मन्दिरों का विशाल समूह व धर्मशालाएं है । वाराणसी पान, पांडे, घाट, ठग के लिये प्रसिद्ध है । मन्दिरों की गिनती करना कठिन है, मस्जिदें बहुत हैं । हिन्दू विश्वविद्यालय में श्री पार्श्वनाथ जैन शोध विद्यापीठ हैं । यहां अनेकों जैन शोध संस्थान प्राचीन काल से चले आ रहे है । दिगम्बर जैन समाज ने अनेकों गुरुकुल बनाये है । यहां संग्रहालय है, जहां विपुल मात्रा में पुरातत्व सामग्री मिलती है, यहां सिल्क का काम बहुत होता है । लोग मेहनती है । पान तो अधिक मात्रा में खाया जाता है । बाजार, गलीयां तंग हैं, सारा शहर गंगा के किनारे वसा है, हजारों घाट हैं । घाटों पर मन्दिर व धर्मशालायें हैं । ~~घाट वाराणसी की पहचान~~ है ।

यह भूमि २३वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की जन्म भूमि है । प्रभु के पिता राजा अश्वसेन व माता वामादेवी थी । यह स्थान भेलुपुरी मुहल्ले में है । यहां प्रभु के चार कल्याणक हुए ।

इस स्थान से १.५ कि.मी. की दूरी पर गंगा नदी के तट पर जैन घाट है । स्टेशन से यह ४ कि.मी. दूर है, यह स्थान प्रभु सुपार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा है । वाराणसी से २३ कि.मी. दूर चन्द्रपुरी तीर्थ है जहां चन्द्रप्रभु भगवान के चार कल्याणक हुए थे ।

वाराणसी से ७ कि.मी. दूरी पर सारनाथ है । इसे सिंहपुरी कहते हैं । यहां भगवान श्रेयांस नाथ के चार कल्याणक हुए थे । सारनाथ भी श्रेयांसपुरी का अपभ्रंश लगता है ।

इस प्रकार वाराणसी में चार तीर्थंकरों के च्यवन, जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान कल्याणक हुए थे ।

वाराणसी में इन तीर्थ के अतिरिक्त १२ श्वेताम्बर मन्दिर व ११ दिगम्बर मन्दिर तीर्थ की शोभा में चार चांद लगाते हैं । यहां राजघाट व अन्य स्थानों पर खुदाई के समय जो पुरातत्व सामग्री प्राप्त होती है, वह स्थानीय कला भवन में सुरक्षित है । इनमें अनेकों पाषाण व धातु की अनेकों कलात्मक जैन प्रतिमाएं प्राप्त होती हैं ।

वाराणसी तीर्थ का इतिहास प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव से प्रारम्भ होता है। यह वही पवित्र धरती है जहां भगत कबीर, संत तुलसीदास, संत रविदास, सैन भक्त जैसे महापुरुष पैदा हुए । मीराबाई यहां आई थी । भक्ति मार्ग के अनेकों भक्तों का सम्बन्ध इस धरती से है ।

## हमारा वाराणसी आगमन :

हम वाराणसी पहुंचे तो रात्रि होने वाली थी, सबसे पहले यहां के प्रसिद्ध घाट में राजा हरीशचन्द्र का घाट देखा । जहां मरने के लिये हर हिन्दू की कामना रहती है कि उसका अंतिम संस्कार इस घाट पर अग्नि संस्कार इस घाट पर हो । यहां मुर्दे को जलाने का ठेका ठेकेदार वाराणसी नगर पालिका को देता है जो करोड़ों रुपये तक पहुंचता है । यहां राजा हरीशचन्द्र ने सत्य की परीक्षा दी थी । हरीशचन्द्र ने यहां चण्डाल के नौकरी की थी, उसकी रानी तारा ने भी नौकरी की थी । हरीशचन्द्र के पुत्र रोहित को सांप ने डसा, हरीशचन्द्र के जिम्मे इस श्मशान का जिम्मा था । वह हर मृतक के परिवार से एक शुल्क लेता था । इसी कारण उसने अपने पुत्र व पत्नी तक को नहीं छोड़ा, पर हरीशचन्द्र ने अपनी परीक्षा दी, वह इस परीक्षा में सफल

हुआ । इसीलिये सत्य व हरीशचन्द्र पर्यायवाची शब्द हो गये ।

फिर यहां के घाट देखे, एक मन्दिर का नाम मानस मन्दिर है जहां सारी दीवारों पर रामायण लिखी गई है । दुर्गा मन्दिर भी प्रसिद्ध है । यहां रामभक्त हुनमान का विशाल मन्दिर है ।

फिर हम प्राचीन काशी विश्वनाथ के मन्दिर में पहुंचे, यह एक तंग गली में था । इस मन्दिर के ऊपर सोना लगा है, इस मन्दिर के एक भाग को गिरवा कर ही मुगल वादशाह औरंगजेव ने मस्जिद निर्मित की है जिसे ज्ञानवापी मस्जिद कहा जाता है । दोनों स्थान पास पास होने से सुरक्षा का ध्यान सरकार की ओर से रखा जाता है । इस तरह रात्रि को जितने भी हिन्दू मन्दिर खुले थे, उनके दर्शन किये । यहां के हिन्दू मन्दिर काफी देर तक खुले रहते है । यहां साधु-सन्यासियों के झुण्ड घाटों पर देखे जा सकते हैं । यहां मांगने वालों की कमी नहीं । हिप्पी लहर के सन्यासी घाट पर देखे जा सकते हैं अव यहां उनकी गिनती कम हो चुकी है । यहां ठहरने के लिये होटल, धर्मशालाओं, लॉज, रेस्टोरैंटों की भरमार है । यहां का प्रमुख उद्योग पर्यटन हैं । गंगा तट पर किश्तीयां देखी जा सकती हैं । यह किश्तीयां एक घाट से दूसरे घाट पर पहुंचाने का महत्वपूर्ण व सस्ता साधन है । कई मन्दिरों तक तो विना किश्ती के पहुंचना असंभव है ।

संसार में यह शहर अनुपम आस्था व श्रद्धा का प्रतीक है । जहां भारत के प्रमुख तीन धर्मों में स्थल हैं जिसे प्राचीन काल से विद्या का केन्द्र वनने का सौभाग्य प्राप्त है । यहां अनेकों विद्यापीट हैं जहां संस्कृत पढ़ाने के मुख्य केन्द्र हैं । इसका प्रमाण यहां संस्कृत विश्वविद्यालय है । हिन्दू विश्वविद्यालय है जिसकी स्थापना प्रसिद्ध नेता राष्ट्रवादी मदन मोहन

मालविया ने की थी । यहां भारतीय विद्या पढ़ाने का अच्छा प्रवन्ध है । प्राकृत, नेपाली भाषाओं के अतिरिक्त यहां जैन वौद्ध व हिन्दू धर्म के अध्ययन के लिये अच्छे केन्द्र हैं । इनमें से कई केन्द्रों को देखने का मुझे सौभाग्य मिला । हिन्दू विश्वविद्यालय को मैंने सारा साहित्य भेंट किया । काशी विद्वानों की जननी है, यहां की मिट्टी में गुण हैं कि यहां सरस्वती पुत्रों की भरमार है। यहां शंकराचार्य भी आये थे । यहां विभिन्न धर्मों में आपसी शास्त्रार्थ हुए थे । यहां स्वामी आचार्य प्रसिद्ध तर्कवादी पंडित यशोविजय जी भी गुजरात से यहां आये थे । यहां की पीठों में धर्म, भाषा, न्याय, तर्क की शिक्षा का जैसा प्रवन्ध है, वैसा भारत में कहीं नहीं देखा जा सकता ।

आज भी धर्म, संस्कृति व इतिहास का केन्द्र है । यह तीर्थ है । गंगा नदी इसके चरणों में वहती है । इस नगर का कण-कण पूज्नीय है । जव मुस्लमान भारत में आये तो उन्हें भी वाराणसी पसन्द आया । उन्होंने यहां रुकने का मन वनाया । अनेकों मस्जिदों का निर्माण किया । वाराणसी के पास ही उन्होंने नया नगर वनाया जिसका नाम मुगल सराय है । शेरशाह सूरि ने इस नगर को जी.टी. रोड से जोड़ दिया । इससे पहले यह किस मार्ग से जुड़ा था इसका वर्णन भारतीय इतिहास में कम मिलता है । यहां चीनी यात्री ह्यूनसांग भी आया था । उसने यहां वौद्ध तीर्थों की स्थिति के वारे में वर्णन वताया है । रात्री हो चुकी थी । हमने एक धर्मशाला में स्थान ग्रहण किया, फिर वाहर से भोजन किया । यहां की रात्रि वहुत सुन्दर होती है । गंगा के किनारे सारा शहर झिलमिला रहा था । लगता था जैसे समुद्र के वीच दीप हों । सारा वातावरण धार्मिक भजनों व आरतीयों से गूंज रहा था। सारा वातावरण आत्मा को भक्ति की ओर

ले जाने वाला था यहां विभिन्न धर्मों के लोग आपस में प्रेम से रहते हैं । सारी रात बाजार बंद नहीं होते । खाने पीने से विपुल सामग्री हर समय मिलती है, वह भी शुद्ध और ठीक कीमत पर । बड़ी बात यह है कि इस शहर में लाखों की संख्या में यात्रियों का आवागमन रहता हैं । मुगल सराय मुख्य स्टेशन है । यहां कोयले की बड़ी थोक मार्किट है । यहां से कोयला ट्रकों से कोयले का लादान होता है । सारे भारत के कोयले के व्यापारी इसी स्थान पर रहते हैं, उनके दफ्तर भी इसी शहर में हैं ।

रात्री काफी हो चुकी थी, थकावट के बावजूद हम काफी घूम चुके थे । यहां के मुहल्ले बहुत तंग हैं यात्रा ज्यादा पैदल करनी पड़ती है । दूसरे यहां भीड़ इतनी रहती है कि पैदल चलकर व्यक्ति जल्द अपनी मंजिल पर पहुंच सकता है । हमने अगले दिन के लिये यात्रा का कार्यक्रम बनाया । हम अभी वाराणसी में थे । उसी हिसाब से हमने प्रोग्राम बनाया ।

## प्रभु पार्श्वनाथ व उनका जन्म स्थान :

वाराणसी के राजा अश्वसेन व माता वामा देवी के यहां २३वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का जन्म ७७७ ई०पू० में हुआ था । उस समय यहां हठयोगियों का जमाना था । उन्होंने अपनी बहादुरी से एक जंग जीती थी । जिस राजा की उन्होंने सहायता की थी उसकी पुत्री प्रभावती की शादी आपसे से हुई थी । शरणागत की रक्षा के लिये आपको यह युद्ध करना पड़ा । यह कुशस्थल के राजा प्रसेनचित्त थे, जिन्हें कलिंग के राजा यवन राज ने तंग करना शुरु कर दिया था ।

जब कुछ बड़े हुए तो एक योगी आपके शहर में

आया । उसने जंगल में पंचागिनी तप प्रारम्भ किया । लोग उनके दर्शन करने जा रहे थे । आपको लोगों ने उस योगी के दर्शन करने को कहा । आप हाथी पर सवार होकर योगी के पास जंगल में आये । वहां योगी को देखा । उसकी अग्नि में जीवित नाग-नागिन का जोड़ा जल रहा था । प्रभु पार्श्वनाथ तीन ज्ञान के धारक थे । प्रभु पार्श्वनाथ ने कहा, "योगी राज ! तू कैसा तप कर रहा है ? जिस लक्कड़ को तू जला रहा है उस लकड़ी मे नाग-नागिन का जोड़ा जल रहा है ।"

योगी ने कहा, "तुम संसारिक राजकुमार है, तुम्हें क्या पता है कि योगी क्या होता है ? तू भौतिकवादी है । तुझे धर्म कर्म का क्या पता ?"

योगी की बात सुनकर प्रभु पार्श्वनाथ ने एक हाथ में कुल्हाड़ी ली, फिर उस लकड़ को कुल्हाड़ी से चीरा । नाग-नागिन का जोड़ा जल रहा था । प्रभु पार्श्वनाथ ने उसे नवकार मंत्र सुनाया । वही मरकर धरेन्द्रचन्द्र व पद्मावती बने ।

प्रभु पार्श्वनाथ ने सांसारिक सुखों को छोड़ा, फिर दीक्षा ग्रहण की । १०० दिन की तपस्या के बाद उन्हें केवल्य ज्ञान हुआ । प्रभु पार्श्वनाथ का प्रथम उपदेश भी इस नगर में हुआ । डा० जैकोवी ने भारत का प्रथम इतिहासिक महापुरुष भगवान पार्श्वनाथ को माना है । प्रभु पार्श्वनाथ का समय हठयोगियों का समय रहा है । वह योगी हठ योग से स्वर्ग व मोक्ष की इच्छा करते थे । जब प्रभु पार्श्वनाथ तपस्या कर रहे थे तो हठ योगी मरकर देव बन चुका था । उसे अपना पूर्व जन्म याद था । उसका पिछले जन्म में जो अपमान सहा था, उसके कारण वह प्रभु पार्श्वनाथ का विद्वेषी बन गया । उसने सात दिन-रात्रि तक अपने देव बल से वर्षा प्रारम्भ की

। प्रभु पार्श्वनाथ का आधा शरीर वर्षो के प्रभाव से जलमग्न हो गया । शहर के सभी मकान डूब गये । लोग त्राहि त्राहि करने लगे । प्रभु पार्श्वनाथ के सेवक धरनेन्द्र व पद्मावती ने इस परिषह में सहायता की । धरेन्द्र ने अपना फन फैलाकर प्रभु पार्श्वनाथ पर अपना छत्र किया । मिथ्यात्वी कमठ जितनी वर्षा करता रहा, प्रभु पार्श्वनाथ का आसन उतना ही ऊंचा होता गया । आखिर प्रभु पार्श्वनाथ को केवलज्ञान प्राप्त हो गया । कमठ का अहंकार समाप्त हुआ । प्रभु पार्श्वनाथ का समोसरण लगा जिसमें अनेकों जीवों ने प्रभु का उपदेश सुनकर आत्मा का उदार किया । कई भव्य आत्माओं ने मुनिव्रत व श्रावक व्रत ग्रहण किया । फिर प्रभु पार्श्वनाथ ने कश्मीर से कन्याकुमारी तक का अपना जन उपयोगी धर्म उपदेश दिया । यही कारण है कि जैन धर्म के चौवीस तीर्थंकरों में सवसे अधिक पूजा भगवान पार्श्वनाथ की होती है । उन्हें प्रभावक तीर्थंकर के रूप में जाना जाता है । समेद शिखर पर प्रभु पार्श्वनाथ मोक्ष पधारे थे । इसलिये हमने प्रभु पार्श्वनाथ के जन्म स्थान का वर्णन संक्षेप में किया है ।

## श्री भेलुपुरी तीर्थ :

यह तीर्थ वाराणसी स्टेशन से ३ कि.मी. दूर भेलुपुरी मुहल्ले में स्थित है । यहां हम आटोरिक्शा में पहुंचे । यह मन्दिर भारतवर्ष का एक मात्र मन्दिर ऐसा मन्दिर है, जहां श्वेताम्वर व दिगम्वर जैन एक ही वेदी में भगवान पार्श्वनाथ की पूजा करते हैं पर कुछ समय हुआ जव दिगम्वर मन्दिर की स्थापना के इसी मन्दिर के अहाते में हुई है । यहां श्वेताम्वर व दिगम्वर धर्मशाला है । हम प्रभु पार्श्वनाथ की जन्म स्थली में स्वयं को पाकर जीवन को धन्य मान रहे थे । यह वह स्थल था, जहां राजकुमार पार्श्व ने जन्म

लिया । उनकी क्रीड़ा स्थली इसी वाराणसी के घाट रहे । उन्होंने यहां ही दीक्षा ली । अनेकों वार वह जनकल्याणर्थ हेतू यहां पधारे । उनकी इस याद को उन्होंने भक्तिपूर्वक संभाल कर रखा । आज भी प्रभु पार्श्वनाथ के दीवाने इस जगह पूजा, भक्ति से अपना जीवन धन्य करते हैं । इस मन्दिर में अधिकांश प्रतिमायें धातु की हैं । हमारे लिये यह सौभाग्य का समय था । हम प्रभु पार्श्वनाथ की भक्ति में मगन हो गये । हमारे सामने इतना आध्यात्मिक वातावरण था कि इसका नशा उतारने से भी नहीं उतर रहा था । भजन, स्तवन, मंत्रोंचार से भाव पूजा व अष्टद्रव्यों से द्रव्य पूजा हो रही थी । हम यहां कुछ समय रुके, आसपास के स्थलों के दर्शन किये, फिर अगले गन्तव्य की रवाना हो गये ।

## श्री भदेनीपुर तीर्थ :

यहां से चलकर, हम १५ कि.मी. की दूरी पर भदैनी तीर्थ पहुंचे । यह तीर्थ गंगा के किनारे है । यह सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ की उच्चन, जन्म दीक्षा, केवल्य ज्ञान हुए थे । यह मन्दिर जैन घाट पर स्थित है, स्टेशन से यह ४ कि.मी. दूरी पर है । यह वाराणसी का भाग है । यहां से गंगा नदी के तट पर स्थापत मन्दिरों का नजारा अति शोभायमान लगता है । शांत वातावरण में कल-कल वहती हुई गंगा नदी भी अपनी मन्द मधुर स्वर में मानो प्रभु का नाम निरंन्तर संस्मरण कर रही हो । यहां श्वेताम्वर व दिगम्वर धर्मशालाएं व मन्दिर हैं । हम दोनों मन्दिरों में पहुंचे । यहां भक्तों का तांता लगा मिला । यह वाराणसी के मन्दिरों की खूवी है कि आप जिस मन्दिर में जाओगे, भक्तों की कमी नहीं मिलेगी । यह मन्दिर अपनी प्राचीनता का

जीता जागता प्रमाण है । हमें इस तीर्थ के दर्शन, वन्दना का अवसर मिला, यह प्रभु सुपार्श्वनाथ का निमन्त्रण था ।

## श्री चन्द्रप्रभु का जन्म स्थान-चन्द्रपुरी :

भगवान चन्द्रप्रभु का च्यवन, जंन्म, दीक्षा व केवलज्ञान के स्थान का नाम चन्द्रपुरी है । वाराणसी से यह २३ कि. मी. है । स्टेशन से सभी प्रकार के वाहन उपलब्ध हैं । यहां दिन भर बसों का आगमन रहता है । मन्दिर के लिये जीप उपलब्ध है । कादीपुर व रजवीरा रेलवे स्टेशन से ४ कि.मी. की दूरी है । यह तीर्थ वाराणसी-गाजीपुर मार्ग पर सड़क के दाहिनी ओर स्थित है । इस तीर्थ का कण-कण वन्दनीय है । गंगा तट पर बने दिगम्बर व श्वेताम्बर मन्दिर दोनों आस पास हैं । दोनों मन्दिरों की व्यवस्था एक ही गंगा के किनारे स्थित इस पावन स्थली का प्राकृतिक सौन्दर्य अत्यन्त मनोरम है । हमने इस तीर्थ की यात्रा जीप द्वारा की । इस मन्दिर में काफी प्राचीन प्रतिमा है । दोनों मन्दिर सुन्दर प्रतिमाओं से सुशोभित हैं । भगवान चन्द्रप्रभु जी की प्रतिमा मनोहारी है । हृदय में वैराग्य उत्पन्न करने वाली है ।

यहां १५-१५ कमरे की दो श्वेताम्बर व दिगम्बर धर्मशाला है । भोजनशाला की सुन्दर व्यवस्था है । हमारा यह सौभाग्य था कि हम भगवान चन्द्रप्रभु के जन्म स्थान को वन्दना कर रहे थे । यहां भी यात्रियों की कोई कमी नहीं है । यात्री यहां काफी रुकना पसन्द करते हैं । यात्री कई दिन रुककर प्रभु भक्ति में स्वयं को समर्पित करते हैं । इस नगर का नाम चन्द्रवती भी है ।

प्रभु चन्द्रप्रभु को वन्दना पूजन किया । फिर हमें यहां के जैन-बौद्ध तीर्थों की ओर रवाना होना था । हम भ्रमण करते थक चुके थे, पर एक तीर्थ को छोड़ना भी ठीक नहीं

लगता था । हमने इस नगरी को प्रणाम किया और आगे बढ़ गये ।

## श्री सिंहपुरी :

यह स्थल प्रभु श्रेयांस नाथ च्यवन, जन्मदीक्षा व केवलज्ञान स्थल है । यह स्टेशन वाराणसी छावनी से ३ कि. मी. दूर है जहां से सभी आवागमन के साधन उपलब्ध हैं । इसका दूसरा नाम सारनाथ है । यहां महात्मा बुद्ध का प्रथम उपदेश हुआ था, यहां अनेकों बौद्ध मन्दिर व मठ हैं । देश-विदेश के बौद्ध भिक्षु घूमते देखे जा सकते हैं । सारनाथ के चौराहे पर एक टीले पर प्राचीन दिगम्बर जैन मन्दिर है । श्वेताम्बर मन्दिर सारनाथ से १ कि.मी. दूर हीरावणपुर गांव में है । यह स्थान चन्द्रवती तीर्थ से १५ कि.मी. की दूरी पर है । इस क्षेत्र का इतिहास भगवान श्रेयांस नाथ से शुरु होता है जहां दिगम्बर मन्दिर है । उसके पास १८३ फुट ऊंचा प्राचीन कलात्मक अष्टकोण स्तूप है । इसे बौद्ध अशोक स्तूप कहते हैं । पर मन्दिर में एक पट लगा है, इसमें कहा गया है, ''यहां प्रभु श्रेयांस नाथ का समोसरण हुआ था । उनकी स्मृति में मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त ने यह स्तूप बनवाया था । यह लगभग २२०० वर्ष पुराना है । यहां के प्राचीन विशाल स्तूप की विचित्र कला वरणातीत यहां श्वेताम्बर व दिगम्बर धर्मशालाएं हैं । यहां रहने के लिये गैस्ट हाऊस भी हैं । हमने यहां देखा कि जैनों से अधिक यहां विदेशी यात्री ज्यादा आते हैं । हमने श्वेताम्बर व दिगम्बर मन्दिर की पूजा में भाग लिया । यहां बौद्ध पालीशोध संस्थान में प्रतिमाओं की भरमार है । महात्मा बुद्ध की अधिकांश प्रतिमाएं इस शोध संस्थान के संग्रहालय में हैं । सभी प्रतिमाएं लाल रंग की हैं । इस स्थान पर भारत सरकार का